International Journal of Enhanced Research in Educational Development (IJERED)
ISSN: 2320-8708, Vol. 12 Issue 1, Jan.-Feb., 2024, Impact Factor: 8.376

मौर्ययुगीन मूर्तिकला का स्वरूप एवं आयाम

डॉ0 प्रवीण कुमार तिवारी

प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्त्व विभाग, वीर बहादुर सिंह, पूर्वांचल विश्वविद्यालय, जौनपुर (उ0 प्र0)

भारत के सांस्कृतिक इतिहास में मौर्यकाल अपनी विशिष्ट कला के माध्यम से महत्वपूर्ण स्थान रखता है। मौर्यकालीन कला ने न केवल भारतीय परम्परा को अक्षुण बनाऐ रखा, वरन् कला को एक नवीन आयाम प्रदान करने का कार्य किया। वास्तविकता यह है कि मौर्यकाल में कला को राजकीय संरक्षण भी प्रदान किया गया। इस काल मे कला का जो स्वरूप एवं विषयवस्तु प्राप्त होते है, वह बहुमुखी एवं समृद्ध है। मौर्यकाल में कला के दो विशिष्ट स्वरूप प्राप्त होते है। प्रथम वह कला जो राजकीय संरक्षण में पल्लवित एवं विकसित हुई तथा द्वितीय लोककला, जिसमें जनसाधारण ने अपनी भावनाओं को अभिव्यक्त करने के लिए कला को अपना माध्यम बनाया। राजकीय कला के अन्तर्गत नगर निर्माण, राजप्रसाद, स्तूप, गुहा एवं पाषाण स्तम्भां का निर्माण तथा तक्षण कला को सम्मलित किया जाता है। लोक कला में मनके, मिट्टी की मूर्तियाँ तथा उत्तरी काली चमकीले मृदभांड को सम्मलित किया जाता है।

वाराणसी के समीप सारनाथ नामक स्थान से मौर्यकाल के अनेक अवशेष प्राप्त होते है, जिनका सम्बन्ध बौद्ध धर्म से है। इनमें सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रस्तर स्तम्भ है। सारनाथ से अशोककालीन एक पाषाण वेष्टनी प्राप्त होती है, जो कि बौद्ध विहार के प्रधान चैत्य के दक्षिण गृह में ईटों के एक छोटे स्तूप के चारों ओर लगाई गई थी। यह प्रस्तर वेष्टनी एक ही प्रस्तर खण्ड से बनाई गई है, जिसमें कही भी जोड नही है। पाषाण वेष्टनी बहुत ही सुन्दर, चिकनी तथा चमकदार है। इसके निर्माण का व्यय सवाहिका नामक किसी व्यक्ति के द्वारा किया गया था, जिसका नाम पाषाण वेष्टनी पर अंकित है।[1] सारनाथ में बहुत सी ऐसी प्रस्तर मूर्तियाँ प्राप्त होती है, जो कि खण्डित अवस्था में है। इन पर चमकदार ओप होने के कारण इनकों मौर्यकाल से सम्बन्धित माना जाता है।

मौर्यकाल में तक्षशिला एक महत्वपूर्ण स्थल था जो कि उत्तरापथ की राजधानी के रूप में प्रख्यात था। इस स्थल की खुदाई से मौर्यकाल से सम्बन्धित अनेक पुरावशेष प्राप्त होते है। इस स्थान से प्राप्त आभूषणों के आधार पर मौर्यकालीन आभूषण कला के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त होती है। सुवर्ण द्वारा निर्मित ये आभूषण प्रशस्त रत्नों द्वारा जड़ित है। यह आभूषण भिड़ नामक स्थान से प्राप्त हुए है।[2]

प्रयाग के दक्षिण पश्चिम में बुन्देलखण्ड क्षेत्र में भरहुत नामक स्थान से मौर्यकालीन अनेक साक्ष्य प्राप्त होते है। भरहुत से एक विशाल स्तूप के अवशेष प्राप्त हुए है। इसका निर्माण ईटों से किया गया है, जिसका व्यास 68 फीट था। स्तूप के चारो ओर एक पाषाण वेष्टनी प्राप्त होती है, जिस पर बौद्ध गाथाओं का चित्रण किया गया है।[3] यह पाषाण वेष्टनी 7 फीट से अधिक ऊँची थी। यह चार समकोण प्रकोष्ठों में विभाजित थी तथा इनके मध्य में सुन्दर तोरणों से युक्त द्वार बनाए गए थे। पाषाण वेष्टनी के चित्रों में जातक कथाओं को प्रदर्शित किया गया है। इस स्तूप में बड़ी संख्या में छोटे छोटे आले (ताखें) बने हुए है, जो कि निश्चित रूप से उत्सवों के दौरान दीप प्रज्ज्वलित करने के लिए बनाए गए थे। वर्तमान समय में यह भग्नावस्था में है तथा इसके पाषाण वेष्टनी का अधिकांश भाग कोलकाता संग्रहालय में सुरक्षित है।

सारनाथ, सांची एवं भरहुत के समान ही मौर्य काल के अनेक स्थानों पर इसी प्रकार की पाषाण वेष्टनी प्राप्त होती है। बोधगया से प्राप्त एक पाषाण वेष्टनी के अवशेष को अशोक के काल का माना जाता है। वेसनगर से एक पाषाण वेष्टनी प्राप्त होती है, जो कि विभिन्न चित्रों से विभूषित है। पाटिलपुत्र की खुदाई से तीन पाषाण वेष्टनी के अवशेष प्राप्त होते है। यह सभी पाषाण वेष्टनियाँ कला की दृष्टि से उत्कृष्ट है तथा सभी एक ही प्रस्तर खण्ड से निर्मित है।[4]

मौर्यकाल में विशेष रूप से अशोक के द्वारा बड़ी संख्या में स्तम्भ लेख प्राप्त होते है। कला की दृष्टि से यह स्तम्भ महत्वपूर्ण माने जाते है। अभी तक मौर्यकाल से सम्बन्धित कुल 17 स्तम्भ प्राप्त हो चुके है, जिनमें से 13 को अशोक कालीन माना जाता है। इन सभी स्तम्भों का निर्माण चुनार के बलुआँ पत्थर से किया गया है। सभी स्तम्भों को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है। स्तम्भ का सम्पूर्ण लाट एक पत्थर से निर्मित है, जबकि इसका शीर्ष भाग को एक अन्य पत्थर से निर्मित किया गया है। सम्पूर्ण स्तम्भ पर ओप किए जाने का प्रमाण प्राप्त होता है, जिसके कारण यह चमकदार एवं चिकना है।[5] मौर्यकाल की यह कला सम्प्रति के काल तक चलती रही तथा उसके पश्चात इस प्रकार का कोई निर्माण प्राप्त नही होता है।

अशोक कालीन स्तम्भों के लाट गोल तथा नीचे से ऊपर तक चढ़ाव उतारदार है। इनकी ऊँचाई तीस से चालीस फीट तक तथा इनका वनज 1000 से 1200 मन तक है। लौरिया नन्दनगढ़ के स्तम्भ का व्यास नीचे 35 इंच तथा ऊपर 22 इंच के लगभग है। लाटों का शीर्ष भाग पृथक रूप से बनाकर बाद में उनके साथ संयुक्त किया गया है। यह मौर्यकालीन मूर्तिकला का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण माने जाते है। मौर्यकालीन स्तम्भ के शीर्ष भाग के पाँच अंश है। प्रथम लाट के ठीक ऊपर इकहरी अथवा दोहरी पतली मेखला। द्वितीय मेखला के ऊपर लोटी हुई कमल पंखुड़ियों की आलंकारिक आकृति वाले घंटें की आकृति। तृतीय उस पर एक कंठा जो कि मोटी डोरी अथवा सादे गोले के ढंग से निर्मित है। चर्तुथ इसके ऊपर गोल अथवा चौखण्ड़ी चौकी। पंचम इस चौखण्ड़ी चौकी पर एक अथवा एक से अधिक पशुओं की प्रतिकृति। विभिन्न स्तम्भां में यह पशु आकृति भिन्न भिन्न प्रकार के है, जिनमें सिंह, वृषभ,

हाथी, अश्व तथा हंस प्रमुख है। अशोक के विभिन्न स्तम्भां मे सारनाथ का स्तम्भ सर्वश्रेष्ठ माना गया है। इसकी चौकी पर चार पहिए चित्रित है। उनके मध्य में हाथी, वृषभ, अश्व एवं सिंह के चित्र खोदे गए है। इन चक्रों एवं प्राणियों को चलित अवस्था में दिखाया गया है। चौकी के शीर्ष पर चार सिंह पीठ से पीठ मिलाए, चारो दिशाओं की ओर मुख किए हुए बैठे है।[6] इनकी आकृतियाँ भव्य, दर्शनीय एवं गौरवपूर्ण है, जिनमें कल्पना, यर्थाथ तथा सौन्दर्य का अद्भुत मिश्रण मिलता है। सिंह मूर्तियों का प्रत्येक अंग अत्यन्त सजीव एवं कलात्मक है। उनके बाल तक अत्यन्त बरीकी से बनाए गए है। पूर्व में इन सिंह मूर्तियों की आँचो मणियुक्त थी, परन्तु वर्तमान में इनमें मणियाँ प्राप्त नही होती है।

मौर्यकाल में जिस प्रकार से विशाल, सुन्दर, चिकनें एवं चमकदार स्तम्भों का निर्माण किया गया है, उस प्रकार के अवशेष भारत अथवा भारत के बाहर किसी भी अन्य स्थान पर प्राप्त नही होते है। भारत आने वाले विदेशी यात्री इसे देखकर आश्र्चयचकित रह जाते है, उनको भ्रम होता है कि यह धातु निर्मित है। पत्थर को काट कर तथा घिस कर जिस प्रकार के सुन्दर स्तम्भों तथा मूर्तियों का निर्माण किया गया। उस प्रकार की उत्कृष्ट कला का उदाहरण मौयों के अतिरिक्त और कही प्राप्त नही होता है।

मौर्य युग में गुहा भवन का निर्माण प्रस्तर को काट कर अत्यंत सुन्दर एवं आकर्षक रूप में किया गया। गया जिले के बराबर की पहाड़ियों में अशोक द्वारा आजीवक संप्रदाय के लिए तीन गुहा भवनों का निर्माण करवाया। इसी प्रकार के गुहा भवनों का निर्माण अशोक के पौत्र दशरथ के द्वारा बराबर एवं नागार्जुनी पहाड़ियां पर करवाया गया। बराबर पहाड़ी पर स्थित चार में से तीन गुफाओं पर अशोक के छोटे लेख अंकित है, जबकि चौथी गुफा पर मौखरि शासक अनन्तवर्मन का लेख उत्कीर्ण है। नागार्जुनी पहाड़ी पर तीन शैल कृत गुफाओं में दशरथ के अभिलेख उत्कीर्ण है। इनमें से बराबर की पहाड़ी पर स्थित सुदामा गुफा को सबसे प्राचीन माना जाता है। इस गुफा समूह में चार गुफायें बराबर की पहाड़ियों पर प्राप्त होती है। कर्णचौपड़, सुदामा, लोमश ऋषि तथा विश्वझोपड़ी।,नागार्जुनी पहाड़ी पर गोपिका, वहीजक तथा बडल्हीक गुफाए स्थित है।[7]

लोमश ऋषि की गुफा के द्वार पर मेहराब में हाथियों की एक सुन्दर पंक्ति पत्थर काट कर बनाई गई है। गुहाभवनों की भित्तियों पर चमकदार ओप की गई है, जो कांच के समान चमकती है। इन गुफाओ को अत्यन्त कठोर शिलाओं को धैर्य तथा परिश्रम से काट कर निवास के लिए भवन बनाने की जिस कला का चरम विकास अजन्ता एवं ऐलोरा की गृफाओं में दिखाई देता है, उसका सूत्रपात मौर्य युग में ही प्रारम्भ हुआ। पाटिलपुत्र एवं अन्य नगरों की खुदाई से मौर्य काल की अनेक मूर्तियॉ प्राप्त होती है, जो कि बलुए पत्थर से निर्मित है। इन पर चमकदार ओप किया गया है।[8] ओप की कला मौर्य युग की विशेषता मानी जाती है। इन पर सबसे प्रसिद्ध चामरग्राहिणी यक्षी की मूर्ति प्राप्त होती है, जो 6 फीट 9 इन्च ऊँची है। यह दीदारगंज पटना से प्राप्त हुई है। यक्षी का मुखमण्डल अत्यन्त सुन्दर है। अंग प्रत्यंग में समुचित भराव है तथा उसकी मुद्रा दर्शनीय है। इसका प्रयोग मौय्र राजप्रासाद मे सज्जा के लिए किया गया था। इसी प्रकार पाटिलपुत्र के भग्नावशेषों में जैन तीर्थकरों की अनेक खडी मूर्तियॉ

प्राप्त हुई है, जिनमें ओप का प्रयोग किया गया है। इनमें से एक मूर्ति कायोत्सर्ग मुद्रा में है। दुर्भाग्यवश ये मूर्तियॉ खण्ड़ित अवस्था में है तथा इनके केवल धड़ भाग ही उपलब्ध है। कुमराहार की खुदाई में एक मूर्ति का सिर प्राप्त हुआ, जिस पर पगड़ी बनी हुई है तथा कानों में कर्णभूषण लटकाए हुए बनाए गए है। इसी प्रकार की अन्य मूर्तियों में हार, मेखला इत्यादि आभूषण खंचित है।[9] सारनाथ से दो पुरूष मूर्तियों के मस्तक, एक सिर के कतिपय खण्ड तथा एक पक्षी मूर्ति का खण्ड़ित रूप प्राप्त होता है। इन सभी पर चमकदार ओप होने के कारण इनकों मौर्य युग से सम्बन्धित माना जाता है। पत्थरों को काट कर मूर्ति बनाने की कला मौर्य काल में अपने परिपक्व अवस्था में दिखाई देती है। इस युग में पत्थर को तराशनें की कला अपनी पूर्णता को प्राप्त कर चुकी थी।

मौर्य काल में बड़ी संख्या में मृणमूर्तियां प्राप्त होती है। यह मूर्तियॉ पटना, अहिच्छत्र, मथुरा, कौशाम्बी, गाजीपुर इत्यादि क्षेत्रों में बड़ी संख्या मे ंप्राप्त होती है यह सभी मूर्तिया कला के दृष्टि से अत्यन्त सुन्दर तथा तत्कालीन समाज में प्रचलित वेशभूषा तथा सभ्यता के सम्बन्ध में जानकारी प्रदान करती है। बुलन्दीबाग पटना से एक मृणमूर्ति प्राप्त हुई है, जिसकी ऊँचाई लगभग 10 इंच है। यह एक नर्तकी की मूर्ति मानी जाती है, जो कि नृत्य मुद्रा में खड़ी है। इसका दायॉ हाथा ऊपर की ओर उठा हुआ है। इसके सिर पर पगड़ी के ढंग का एक परिधान है, जो कि दोनो तरफ से ऊँचा उठा हुआ है। शरीर के निचले भाग पर एक लहंगा है, जो कि थोड़ा सा ऊपर की ओर उठा हुआ है। इसकी कमर पतली तथा उसके वक्षस्थल पर कपड़े की एक पट्टी बनाई गई है।[10] इसी प्रकार की अन्य मृणमूर्तियॉ अन्य स्थानों पर भी प्राप्त होती है। इसके माध्यम से मौर्यकालीन परिधान, वेशभूषा, तथा आभूषणों के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त होती है।

बुलन्दीबाग पटना से मौर्य युग से सम्बन्धित एक रथ का पहिया प्राप्त होता है, जिसमें 24 आरियाँ है। इस पहिए का व्यास चार फीट का है। इस पर लोहे के बैण्ड का प्रयोग किया गया है। इससे तत्कालीन रथों के आकार तथा स्वरूप के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त होती है। यही से एक मूर्ति का शीर्ष भाग प्राप्त होता है, जिसका निर्माण हाथी दांत से किया गया है। यह आकार में बहुत छोटा है। इसकी ऊँचाई एक इंच तथा चौड़ाई तीन इंच है।[11] यह इस बात का प्ररमाण है कि मौर्यकाल में हाथी दाँत का उपयोग कला कृतियों के निर्माण के लिए किया जाता था।

पाटिलपुत्र के अतिरिक्त मौर्य काल से सम्बन्धित बहुत सी प्रस्तर मूर्तियाँ अन्य स्थानों से प्राप्त होती है। आगरा एवं मथुरा के मध्य परखम नामक स्थान से एक मूर्ति प्राप्त होती है, जिसकी ऊँचाई सात फीट है। इसका निर्माण बलुए पत्थर से किया गया है। इसके ऊपर भी चमकदार ओप किया गया है। दुर्भाग्य से इस मूर्ति का सिर एवं भुजाएँ भग्नावस्था में है। मूर्ति में जिस प्रकार का पहनावा प्राप्त होता है, उससे मौर्यकालीन वेशभूषा के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त होती है। वर्तमान समय में यह मूर्ति मथुरा के संग्रहालय में सुरक्षित है। इसी प्रकार की एक मूर्ति वेसनगर से प्राप्त होती है, जो कि किसी

स्त्री की है। इसकी भुजाएँ तथा मुख भग्न अवस्था में है। इसकी ऊँचाई 6 फीट 7 इंच है।[12] इस पर मौर्यकालीन ओप किया गया है।

इस प्रकार हम देखते है कि मौर्यकाल में मूर्तिकला को एक नवीन आयाम प्राप्त होता है। इस काल में न केवल मूर्ति निर्माण कला में वरन् उसके विषयगत क्षेत्र में भी अनेक प्रकार के परिवर्तन देखने को मिलते है। मूर्तियों को चमकदार बनाने की कला इस काल में अपने विकसित स्वरुप में प्राप्त होती है। इस काल में निर्मित स्तूपों तथा स्तूपों में पाए जाने वाले प्रकोष्ठों से प्राप्त मूर्तियॉ इस काल की मूर्तिकला की भव्यता को प्रदर्शित करती है।

सन्दर्भ ग्रंथ

[1]. मिश्र, रमानाथ, भारतीय कला की विरासत, मैकमिलन्स प्रकाशन नई दिल्ली, 1977,
[2]. उपाध्याय,डॉ0 उदय नारायण, तिवारी, गौतम, भारतीय स्थापत्य एवं कला, मोतीलाल बनारसीदास, 2001.
[3]. रौलैड, बी0, आर्ट एण्ड आकिटेक्चर ऑफ इंडिया, पेन्गुइन, 1967.
[4]. वाजपेयी, कृष्णदत्त, भारतीय वास्तुकला का इतिहासए हिन्दी समिति, लखनऊ, 1972.
[5]. जिमर, एच0, द आर्ट ऑफ इंडिया, न्यूयार्क, 1955,.
[6]. दूबे, श्यामचरण ;(स0) भारतीय सांस्कृतिक धरोहर, मध्यप्रदेश हिन्दी गंरथ अकादमी भोपाल, 1987.
[7]. बाशम, ए0 एल0 ;स0 ए कल्चरल हिस्ट्री ऑफ इंड़िया ऑक्सफोर्ड 1975.
[8]. कुमारस्वामी, ए0 के0 हिस्ट्री ऑफ इंडियन एण्ड इंडोनीसियन आर्ट 1965.
[9]. अग्रवालए वी0 एस0, इंडियन आर्ट, पृथ्वी, वाराणसी, 1965.
[10]. विद्यालंकार, सत्यकेतु, मौर्य साम्रज्य का इतिहास, श्री सरस्वती सदन, नई दिल्ली, 2017.
[11]. ब्राउन, पर्सी, इंड़ियन आर्किटेक्चर बुद्धिस्ट एण्ड हिन्दू पीरियड्स, मुम्बई, 1965,
[12]. पाण्डेय, जयनारायण, भारतीय कला, प्राच्य विद्या संस्थान, प्रयागराज, 2000